SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

डॉ. दिनेश श्रीवास की कहानियों में मानवीय संवेदना का विश्लेषण

डेज़ी कुजूर, (Ph.D.), हिंदी विभाग,
शासकीय मिनीमाता कन्या महाविद्यालय कोरबा, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
डेज़ी कुजूर, (Ph.D.), हिंदी विभाग,
शासकीय मिनीमाता कन्या महाविद्यालय,
कोरबा, छत्तीसगढ़, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 19/09/2022
Revised on : -----
Accepted on : 26/09/2022
Plagiarism : 01% on 19/09/2022

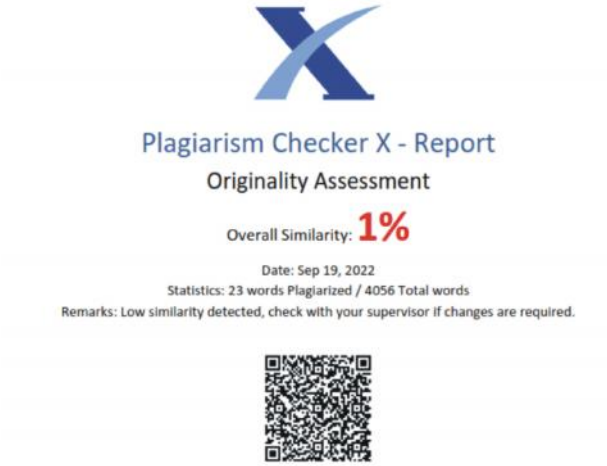

शोध सार

इस भौतिकवादी युग में मानव अपनी भौतिक आवश्यकताओं को जोड़ने में इस कदर उलझा हुआ है कि वह अपने मन की आवाज सुनने की बजाय भीड़ के शोर में स्वयं विस्मृत कर देना पसंद करता है। ऐसे में वह धीरे–धीरे जड़ता का शिकार होता जाता है। मनुष्य की यह अवस्था न केवल समाज के लिए बल्कि देश के लिए भी घातक है। आत्मकेन्द्रित मानव को आज के कथाकार अपनी कथा का मुख्य विषय बना रहे हैं। आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य में छतीसगढ़ के कई साहित्यकारों की मुख्य भूमिका रही है। समय की मांग को देखते हुए छत्तीसगढ़ के कई साहित्यकारों ने भी मानवीय संवेदनाओं को अपने रचनाओं का मुख्य विषय बनाया है। इनमें डॉ. दिनेश श्रीवास का नाम उल्लेखनीय है। वे जनजीवन में समाहित संवेदनाओं को उजागर करने में तटस्थ दिखायी पड़ते हैं। उनकी कहानियों में समाज के उन आम पात्रों का चित्रण है जो समाज में व्याप्त संवेदनहीनता के शिकार हैं। उनकी कहानियों में देश का दिशाहीन युवा वर्ग शामिल है जो समाज की जड़ता के परिणाम स्वरूप स्वस्थ होते हुए भी मानसिक रूप से विकलांगता का शिकार होता जा रहा है। गुप्प अंधेरे में गुम होते युवाओं की दुर्दशा समाज के सामने यक्ष प्रश्न की तरह खड़ा है। डॉ. दिनेश श्रीवास की 8 कहानियां इंस्पेक्टरनी, ऑटोवाला, टीनू की मां, विषधर के बच्चे, विकलता, डायन मां, उल्टा आदमी और बारात 'संवेदना' कथा एवं काव्य संग्रह में संग्रहित हैं। सभी कहानियां आधुनिक जीवन की जटिलताओं को प्रस्तुत करती हैं। वर्तमान जीवन सरल नहीं है। दुनियादारी के भाग–दौड़ में मनुष्य अपनी संवेदना खो चुका है। संवेदना के अभाव में मानव आत्मकेंद्रित और अमानवीय व्यवहार करने लगा है। न केवल मानव जगत को, अपितु सकल चराचर जगत को सहानुभूति और सौहार्द्र की आवश्यकता है। इन सभी कहानियों में

भावनात्मक स्पर्शों से मानवीय मूल्यों को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया है। मानवीय मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं की दृष्टि से कहानियों का विश्लेषण प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है।

मुख्य शब्द

संवेदना, मानवीय मूल्य, व्यष्टि, समष्टि, सौहार्द्र, सहानुभूति.

साहित्य मानवता का पर्याय है। साहित्य में मानवीय गुणों को प्रदर्शित और स्थापित किया जाता है। मानवीयता से ही 'वसुधैव कुटुम्बकम्' संभव है। दूसरे के प्रति सद्भावना से ही समाज को स्थापित रखा जा सकता है। इतिहास प्रमाण है कि एकाधिकार, अराजकता तथा बलप्रयोग से कई समाज और राष्ट्र नष्ट हो गए। समाज की सत्ता मानवमूल्यों की नींव पर टिकी होती है। अंतिम व्यक्ति तक समता, सौहार्द और सद्भावना प्रसारित करते हुए मानवीय संवेदनाओं को जीवित रखा जा सकता है।

मानवीय संवेदनाएँ आज के समय की आवश्यकता है। संवेदनाओं के आदान–प्रदान से व्यक्ति– व्यक्ति की दूरी कम की जा सकती है। सामान्यतः संवेदना का तात्पर्य 'समान दुखानुभूति' होती है। किसी को कष्ट में देखकर मन में होने वाला दुख। किसी की वेदना को देखकर स्वयं भी बहुत कुछ उसी प्रकार की वेदना का अनुभव करना ही संवेदना है। अतः कोई भी साहित्य मानवीय संवेदनाओं से रहित नहीं हो सकता। प्रथम कवि वाल्मिकी ने क्रौंच जोडे के संवेदना से सिक्त होकर महाकाव्य 'रामायण' को रचना प्रारंभ कर दिया था। सम्पूर्ण विश्व साहित्य मानवीय संवेदनाओं से युक्त है।

प्रेमचंद ने अपने समय में साहित्य और समाज के बीच एक मजबूत सेतु की भूमिका निभायी जिससे आम आदमी के मन में भी साहित्य के लिए भरोसा पैदा हुआ। प्रेमचंद ने अपना साहित्य मानव जीवन के उत्थान को ध्यान में रखते हुए लिखा। आचार्य हजारी प्रसाद दिवेजी ने भी साहित्य की मूल प्रवृत्ति मानवीयता को घोषित किया है। अशोक के फूल की पंक्तियाँ द्विवेदी जी के मानवीय संवेदना के चितेरे होने का प्रतिफलन ही तो है।

'समूची मनुष्यता जिससे लाभान्वित हो, एक जाति दूसरी जाति से घृणा न करके प्रेम करे, एक समूह दूसरे समूह को दूर रखने की इच्छा न करके पास लाने का प्रयत्न करे कोई किसी का आश्रित न हो, कोई किसी से वंचित न हो। इस महान उद्देय से ही हमारा साहित्य प्रणोदित होना चाहिये।' इस प्रकार साहित्य में संवेदना आवश्यक है।

संवेदना के साहित्यकार डॉ. दिनेश श्रीवास

छत्तीसगढ़ के कई साहित्यकारों ने मानवीय संवेदनाओं को अपने रचनाओं का मुख्य विषय बनाया है। इनमें से डॉ. दिनेश श्रीवास एक उल्लेखनीय रचनाकार हैं जो जनजीवन में समाहित संवेदनाओं को उजागर करने में सिद्धहस्त है। डॉ. दिनेश श्रीवास ने अपने कविताओं और कहानियों में आज के जीवन से साक्षात्कार किया है। उनके साहित्य में 'समाप्त होते मानवीयता' पर चिंता व्यक्त किया गया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में यह बताया है कि मानवीय संवेदनाओं से यह पूरा समाज स्वर्गिक जीवन जी सकता है। उनके पात्र हमारे जनजीवन के प्रतीक हैं। उनका हर पात्र या तो मानवीयता से भरा हुआ है या मानवीयता की तलाश में है। आधुनिक जीवन के विभिन्न विभीषिकाओं से सचेत करती उनकी रचनाएँ मानवीय मूल्यों को जीवन का चरम लक्ष्य घोषित करती है और एक सरल, समतामूलक और सौहार्दपूर्ण समाज की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करती है।

डॉ दिनेश श्रीवास द्वारा लिखित एवं संपादित कथा एवं काव्य संग्रह 'संवेदना' का प्रकाशन अंतरराष्ट्रीय प्रेस नोशन प्रेस चेन्नई के द्वारा हुआ है। डॉ दिनेश श्रीवास की 8 कहानियां इंस्पेक्टरनी, ऑटोवाला, टीनू की मां, विषधर के बच्चे, विकलता, डायन मां, उल्टा आदमी और बारात इसमें संग्रहित हैं। सभी कहानियां आधुनिक जीवन की जटिलताओं को प्रस्तुत करती हैं। वर्तमान जीवन सरल नहीं है। दुनियादारी के भाग–दौड़ में मनुष्य अपनी संवेदना खो चुका है। संवेदना के अभाव में मानव आत्मकेंद्रित और अमानवीय व्यवहार करने लगा है। न केवल मानव जगत को, अपितु सकल चराचर जगत को सहानुभूति और सौहार्द्र की आवश्यकता है। इस कथा एवं काव्य संग्रह में इन्हीं

भावनात्मक स्पर्शों से मानवीय मूल्यों को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया है ।

कहानियों का सम्प्रेष्य

'टीनू की मां' कहानी में सहानुभूति और प्रेम के नाम पर हो रहे शोषण को उजागर किया गया है। टीनू की मां की ममता निस्वार्थ है। 'विकलता' कहानी स्थितियों के हस्तांतरण की बात करता है। मनुष्य जिन स्थितियों में स्वयं के लिए सहानुभूति रखता है उन्हीं परिस्थितियों में वह दूसरों के लिए सहानुभूति नहीं रखता। राजेश का पुत्र वीरू जिस स्थिति से गुजर रहा है, राजेश भी उस स्थिति से गुजर चुका है। लेकिन इसके बावजूद भी दोनों में संबंधहीनता बढ़ती जाती है और परिवार में संवादहीनता की समस्या बनी रहती है। 'विषधर के बच्चे' मानवीय अंतर्विरोध की कहानी कहता है। मनुष्य स्वयं दो–मुंहे सांप की तरह दोहरा व्यवहार करता है। 'ऑटोवाला' कुसंगति में पड़े विद्रोही युवक की कहानी है जो अपने कृत्यों से परिवार के लिए त्रासदायक बना। 'इंस्पेक्टरनी' कोमल भावनाओं से यथार्थ के टकराहट की कहानी है। जीवन के कटु यथार्थ से महेश का कोमल व्यक्तित्व पूर्णतः यथार्थवादी हो जाता है और शोभना भी इसी त्रासदी को झेलती है। इस कहानी में स्त्री–पुरुष के अहम् को भी विषय बनाया गया है। 'उल्टा आदमी' एक सामाजिक व्यंग है जिसमें परिवार और समाज के लिए हानिकारक चरित्रों की खोज की गई है।

'बारात' कहानी प्रेम विवाह के पश्चात् विवाहेत्तर समस्याओं को सामने रखता है। 'डायन मां' अंधविश्वासों के साथ असहाय लोगों की पीड़ा का व्याख्यान है। पार्वती के वाग्भ्रम और दुष्प्रचार से फूलमती को डायन समझ लिया जाता है जबकि वह एक असहाय और ममतामयी स्त्री है।

कहानियों में मानवीय संवेदना का विश्लेषण

हमारे आसपास में घटित हो रही घटनाओं का भावपूर्ण चित्रण डॉ दिनेश श्रीवास की कहानियों की विशेषता है। 'टीनू की मां' में अपाहिज बेटे की मां के अनकहे दुख और पीड़ा को उकेरने का सफल प्रयास किया गया है। 'टीनू 19 साल का विकलांग लड़का था। बचपन में 5 साल की उम्र में जब उसके पिता का दुर्घटना में निधन हुआ उसी साल से उसके पैर निर्जीव हो गए थे। टीनू की मां उसे शौच–स्नान कराती थी।'

एक विधवा के लिए जवान अपाहिज बेटे की जिम्मेदारी उठाना कठिनाइयों से भरा होता है। टीनू जैसे पात्र हमारे आसपास आसानी से देखने को मिल जाते हैं जो अपने परिवार पर बोझ से ज्यादा कुछ नहीं होते। पुस्तक की भूमिका में लेखक लिखते हैं: 'टीनू की मां कहानी में सहानुभूति और प्रेम के नाम पर हो रहे शोषण को उजागर किया गया है। टीनू की मां की ममता निस्वार्थ है।'

भले टीनू बचपन से अपाहिज था और अपनी इसी विकलांगता का फायदा उठाकर अपनी विधवा मां से अपनी जिद मनवाता है। पूरी कहानी में टीनू एक नाकारा, कामचोर, बेअक्ल, स्वार्थी जिद्दी लड़के के रूप में दिखाई देता है जो अपनी लाचारी का लाभ उठाकर अपनी मां को अपनी उंगलियों पर नचाता है, वहीं टीनू की मां पूरी कहानी में ममतामयी, बेचारी कर्तव्यनिष्ठ और लाचार सी दिखाई पड़ती है। अचानक टीनू के पिता का गुज़र जाना और टीनू का अपाहिज होना उसे दोहरे दुख में दूबो देता है। परिणामतः टीनू के भविष्य की चिंता से ज्यादा, टीनू की जिद मां पर भारी पड़ जाती है। पिता के कठोर अनुशासन से वंचित टीनू न केवल शरीर से बल्कि दिमाग से भी विकलांग दिखायी देता है। मां के लाख समझाने के बावजूद टीनू बीच में ही पढ़ाई छोड़ देता है। टीनू अपनी जिद में पढ़ाई छोड़ देता है और उसकी मां उसके इस फैसले के सामने झुक जाती है। बच्चे तो जिद करते ही हैं। आखिर किसे स्कूल जाना पसंद होता है। माता–पिता के सपने और इच्छा शक्ति से ही बच्चे पढ़ जाते हैं।

टीनू की मां का अपने बेटे पर कोई जोर नहीं था और ना ही उसे अपने बेटे से कोई उम्मीद थी। वह अकेले ही किराना दुकान चलाती। सामान खरीदने के लिए उसे लोकल ट्रेन से शहर जाना पड़ता था। वापस आते कभी उसे देर हो जाती तो घर में नकारा पड़ा टीनू अपनी मां से नाराज हो जाता। जब भी टीनू की मां को किराना सामान के लिए शहर जाना पड़ता तो सुबह ही घर का काम निपटा लेती। टीनू के लिए खाना बनाती और उसे टेबल पर

रख दिया करती। इस पर भी टीनू अपनी मां से नाराजगी दिखाने के लिए खाना नहीं खाता। टीनू नहीं चाहता कि मां उसे छोड़कर जाए– 'लेकिन तुम मुझे छोड़कर ना जाया करो मैं अकेले हो जाता हूँ। मैं दिन भर मगजमारी करता रहता हूँ केवल सरल आंटी है जो मेरे बारे में सोचती है और तुम तो बस– 'थकी हारी टीनू की मां टीनू के उलाहने से और थक जाती जैसे–जैसे टीनू जवान होता जा रहा था टीनू की मां की पीड़ा भी बढ़ती जा रही थी।

बाल मनोविज्ञान का विश्लेषण प्रस्तुत करती कहानी 'विकलता' पीढ़ियों के दर्द को बयां करती है। इस कहानी की समीक्षा करते हुए डॉ. एस. एल. गोयल ने कहा है–'विकलता कहानी बाल मनोविज्ञान की मौलिक कथा कहती है। प्रायः प्रत्येक बच्चे में किसी भी कार्य के तुरंत किए जाने के प्रति एक स्वाभाविक तीव्र आग्रह, अधीरता, व्याकुलता या विकलता पाई जाती है। उसी की सार्थक अभिव्यक्ति पापा, उनका बेटा राजेश और आगे चलकर उसका बेटा वीरू इन तीन पात्रों के माध्यम से अच्छी तरह अभिव्यक्त की गई है..... अपने जिए हुए को सब भूल जाते हैं।'

यह कहानी मानवीय संवेदना के उस स्वरूप को हमारे सामने लाती जो एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी तक प्रसारित होती है किंतु वेदना के स्थितियों से उबरकर मनुष्य उसे भूल जाता है। पिता जिस दर्द को बचपन में सह चुका उसे बाद में भूल जाता है इसीलिए अपने पुत्र के उसी वेदना को अपनी अनुभूति में नहीं ला पाता और पिता–पुत्र की दूरी बढ़ जाती हैं।

संवेदनहीन समाज का एक और चेहरा दिखाती डॉ. दिनेश श्रीवास की कहानी 'ऑटोवाला' इस कहानी में लेखक ने ऐसे पक्ष को छुआ है जो बहुत साधारण होते हुए भी विशेष है। हिंदी कथा साहित्य के आधुनिक कथाकार डॉ दिनेश श्रीवास ने 'ऑटोवाला' कहानी के माध्यम से उपेक्षित हो रहे मनोभावों को प्रकट किया है। ऑटोवाला एक ऐसे युवक की कहानी है जिस पर अपनी जवान बहन की शादी का बोझ है। उसके पिताजी ने आत्महत्या कर ली थी बेटे के कारगुजारियों के कारण। बेटा प्रहलाद अपने पिताजी को कोसता ही रहता है। प्रहलाद का पिता पुलिस वाला था आज जिंदा होता तो थानेदार होता पर प्रहलाद की करतूत का परिणाम था कि वह फांसी पर चढ़ गया। आवारा ऑटोवाला को पिता की तकलीफ से कोई लेना–देना नहीं था वह तो अपनी दुर्दशा का जिम्मेदार अपने स्वर्गवासी पिता को ही मानता है 'बेटे की थोड़ी सी आवारगी बर्दाश्त नहीं कर सका कर सका, फांसी चढ़ गया और मुझे बदनाम कर गया जी जाता तो क्या ? आज थाने का इंचार्ज होता। आवक होती, धाक होता मैं किसी कमीने की बात ना सुनता। मेरा भी जलवा रहता, कार मेंटेन करता आज खाक छानता फिर रहा हूं आज मजे में रहता।'

अपने मरे हुए पिता के प्रति भावहीनता समाज के ऐसे तबके का प्रतिनिधित्व करती है जो अपनी असफलता, अपनी कमजोरी का ठीकरा दूसरों के सर पर फोड़ते हैं। ऐसे लोगों को अपनी गलती का एहसास होता ही नहीं है। चायवाला उसके करतूतों से अच्छी तरह से वाकिफ है। वह उसे कहता है– 'लेकिन तू तो मर्डर में पकड़ा गया न। क्या किसी बाप के लिए यह कम है। बचपन में कान्वेंट स्कूल से भागा, सारे नशे किये, लड़कीबाजी की। सब माफ फिर तुझे अपने बाप की सर्विस रिवाल्वर बेचने में भी संकोच नहीं हुआ' आज के समय में ऑटोवाला जैसे युवा न केवल परिवार के लिए बल्कि समाज और देश के लिए भी घातक हैं। लेखक ने एक बार फिर इस कहानी के माध्यम से माता–पिता की परवरिश पर उंगली उठाई है। आज के मध्यमवर्गीय परिवार विशेष रूप से सरकारी नौकरी करने वाले समाज की दुखती रग पर हाथ रख दिया है। मध्यम वर्गीय समाज की यह विडंबना है कि वह ना तो गरीब होते हैं और ना तो अमीर। गरीबी में रहने की आदत छूट जाती है और अमीरों के शान और शौकत तक पहुंच नहीं पाते, इस खींचतान में बच्चे को रोका जाए या कितना दिया जाए समझ नहीं पाते। ऐसे में ऑटोवाला जैसे युवकों की बड़ी जमात खड़ी हो जाती है जो ना हाड़तोड़ मेहनत कर पैसा कमा सकती है और ना ही अपना दिमाग ही लगा सकती है। एक प्रकार से शारीरिक और मानसिक विकलांगता वाले युवकों की संख्या समाज में आज बढ़ती जा रही है जो चिंतनीय है। नौकरी पेशा वाले माता–पिता पैसा जोड़ने में भागते रह जाते हैं और बच्चे की सही परवरिश नहीं हो पाती। ऐसे ही परवरिश का उदाहरण ऑटोवाला प्रहलाद है, जो पढ़ने–लिखने और कमाने के समय आवारागर्दी करता है और अचानक एक दिन उसके ऊपर पूरे घर की जिम्मेदारी आ जाती है। प्रहलाद की मां बीमार है। स्वर्गवासी पिता की पेंशन का पैसा मां की बीमारी में लग जाता है। बहन मीनाक्षी के लिए मनीराम ने एक लड़का

देखा है। वह यह प्रस्ताव ऑटोवाला की मां को बताता है। तब शादी में होने वाले खर्च की चिंता में प्रहलाद की मां मनीराम से कहती है– 'भैया लेकिन शादी में खर्चा भी खूब होगा, कहां से होगा ? उनकी पेंशन तो मेरी बीमारी में निकल जाती है। लड़का दिन–रात ऑटो चलाता है तब कहीं जाकर गुजारा चलता है।'

डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह ने कहानी के नायक प्रहलाद की सकारात्मकता को उजागर करते हुए कहा हैः

'कहानी का नायक प्रहलाद वैसे तो यौवनकाल में गलत संगत से बर्बाद जीवन का उदाहरण है परंतु सम्पूर्ण कहानी में लेखक द्वारा प्रस्तुत मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर निवेदन किया जा सकता है कि वह बुरा युवक न था। बस उनके बिगड़े हुए मित्रों के दुष्कर्मों का फल उसे अपने पिता को खोकर भुगतना पड़ा। वह वास्तव में बुरे दिलोदिमाग का होता तो उसे अपनी मां की दवाईयों की चिंता न होती और न ही वह हर पल अपनी कुंवारी बहन के शादी करने के बारे में चिंताग्रस्त रहता। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रहलाद कम गलती की ज्यादा सजा भुगत रहा है। दायित्व निर्वहन की भावना उसमें कूट–कूट कर भरी हुई है। उसमें पछतावा भी है इससे उसके सहृदय होने की भावना का पता चलता है।'

उपरोक्त बातों को स्वीकार भी कर लें तो भी कहा जा सकता है कि सबकुछ बिगड़ने के बाद सद्बुद्धि आती है तो वो किस काम की?

यह कहानी पाठक के मन–मस्तिष्क को उद्वेलित कर एक साधारण प्रश्न को गंभीरता से विचारार्थ प्रस्तुत करती है। निश्चित ही ऐसी कहानियां आधुनिक हिंदी कथा साहित्य को समृद्ध करतीं हैं। ऐसी विषय–वस्तु वाली कहानियां समाज के उन पात्रों को चित्रित करतीं हैं जो साधारण हैं जिनके समस्याएं साधारण हैं। पर उन समस्याओं से बाहर निकलने में वे असहाय हैं और सबसे बड़ी बात युवा भारत की सबसे बड़ी आबादी इन्हीं की है। देश की सबसे बड़ी ताकत वहां की जनता होती है। जनता में भी युवाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है ऐसे में पंजू जैसे दिशाहीन युवाओं से देश, समाज भला क्या अपेक्षा कर सकता है? किंतु आज संवेदनहीन समाज ऐसे युवाओं को दिशा दिखाने के बजाय भ्रमित कर रहा है।

स्त्री–पुरूष के अहम् और द्वंद्व को संवेदना के स्तर तक पहुँचाने वाली कहानी है 'इंस्पेक्टरनी' आधुनिक जीवन की विसंगतियां स्त्री–पुरूष के संबंधों पर अपना प्रभाव किस प्रकार छोड़ती हैं, इसका जीता–जागता उदाहरण है 'इंस्पेक्टरनी' कहानी। साहित्यजगत से जुड़ी विदुषियों ने इस कहानी पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त किया है। हिंदी की प्राध्यापक डॉ. ऊषीबाला गुप्ता ने कहा हैः

''..... इस्पेक्टरनी कहानी आज बदलते परिवेश में नारी की दशा और दिशा पर प्रकाश डालती है। वर्तमान में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये है उसमें विशेष है नारी का मुख्य भूमिका में आना। कहानी का मुख्य पात्र महेश का सब इन्स्पेक्टर परीक्षा में सलेक्शन हो जाता है किन्तु माँ की बीमारी के कारण महेश ट्रेनिंग छोड़ देता है और वेटिंग क्लीयर हो जाने से शोभना को मौका मिल जाता है और इंस्पेक्टरनी' बनकर शोभना महेश के शहर में ही पहुँच जाती है। इन्सपेक्टरनी पद को पाने का पूरा श्रेय महेश को ही देती है वह कहती है– 'तुमने इन्सपेक्टर का पोस्ट मेरे लिये छोड़ा था क्योंकि तुम यह मानते थे की इस पोस्ट की जरूरत मुझे ज्यादा थीं। कहीं न कहीं शोभना के मन में ग्लानि की भावना है और ग्लानि को ही प्रेम का स्वरूप देकर अपना सब कुछ उसको समर्पित करने के लिये तत्पर हो जाती है।''

वह कहती हैः 'आई विल मैरी विद यू..... मैं तुमसे शादी करना चाहती हूँ और इसका जवाब मुझे अभी चाहिये मिस्टर वर्मा। 'किन्तु कटु यथार्थ से महेश का कोमल व्यक्तित्व पूर्णतः यथार्थवादी हो चुका है और अहंभाव एवं पुरुषत्व आड़े आ रही है उसका कहना है– 'देखो शोभना मेरे ख्याल से तुम्हें शादी के लिये बड़े अफसर मिल जायेंगें। मैं मामूली सा क्लर्क तुम्हारे साथ फिट नहीं हो पाऊगा। फिर तुम्हें बाद में पछताना पड़ सकता है और – एक के व्यक्तित्व के सामने दूसरे की पहचान नहीं ढकनी चाहिये।'

इस प्रकार सांकेतिक शैली में महेश ने शोभना को शादी के लिये इनकार कर दिया। अंत में शोभना और महेश की अधूरी प्रेम कहानी पाठकों के मन में कई प्रश्न पैदा कर देती है। इस प्रकार वर्तमान जीवन की भावशून्यता स्त्री–पुरूष संबंधों को संचालित करती है जो इस कहानी में बहुत अच्छे से बताया गया है।

उल्टा आदमी एक लोक प्रचलित अनुभव/विश्वास को अपने ढंग से कथा में प्रयुक्त करती मौलिक कहानी है। स्कूल में पढ़नेवाले सोहन के पिताजी जयराम अनेक दिनों से कमर दर्द से परेशान हैं। कई बैगाओं से झाड़–फूंक करवाने पर भी उन्हें आराम ना मिला। तब जयराम 'उल्टा पैदा हुए आदमी' की खोज शुरू कर देते हैं,क्योंकि उन्होंने सुन रखा है कि उल्टा पैदा हुआ आदमी द्वारा कमर में लात मारने से कमर दर्द ठीक हो जाता है। उल्टे आदमी की खोज कर रहे सोहन के पूछने पर शिक्षक बताते हैं कि जो मनुष्य उल्टा सोचता है, उल्टा काम करता है, समाज से अलग काम करता है मेरे विचार से वही उल्टा आदमी है। 'उल्टा आदमी' के तलाश के माध्यम से कुछ अमानवीय, स्वार्थी और संवेदनहीन लोगों को सामने लाया गया है। यह एक सटीक व्यंग्य है।

'बारात' एक मनोवैज्ञानिक तथ्य को रेखांकित करने वाली कहानी है जो व्यंग–विनोद के पुट से जीवंत है। बारहवीं में पढ़ने वाली पूजा ने सतीश से एक प्रकार से भागकर लव मैरिज की है और अब परिवार वालों ने भी उन्हें स्वीकार कर लिया है, फिर भी पूजा के अवचेतन मन में यह टीस लगातार बनी रहती है कि काश! उसका भी घोड़े पर सवार दूल्हा बारात में लेकर आता तो क्या अच्छा होता! ये एक ओर कहानी प्रेमविवाह के नकारात्मक पक्षों को उजागर करता है तो दूसरी ओर प्रेमविवाहेत्तर समस्याओं को स्पष्ट करता है।

'विषधर के बच्चे' कहानी के माध्यम से लेखक ने मानवीय संवेदना के अनछुए पहलूओं को वाणी दी है। एक बड़े व एक छोटे इस तरह कुल दो सांपों के घर में घुस आने, उनको निकालने के लिए इकट्ठा हुए पड़ोसियों के कार्य व्यवहार का अच्छा दृश्य अंकन तो इस कथा में है। लेखक ने संवेदना का क्षेत्र सकल चराचर जगत को माना है इसलिए इस कहानी में जहाँ एक ओर सांप जैसे जीव को भी संवेदना का अधिकारी बताया है। वहाँ पर्यावरण संरक्षण की बात को भी रखा है।

'डायन मां' बड़े कलेवर में बड़ी समस्या को लेकर लिखी गई है। अंधविश्वास, दुष्प्रचार और वाग्भ्रम किस प्रकार किसी के जीवन को तबाह कर सकती है–यह इस कहानी में वर्णित है। कहानी में 'डायन मां' अर्थात् फूलमती इसी की शिकार है। डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह के अनुसारः

'समाज के स्वार्थी और दुराचारी लोग भोले–भाले लोगों में अंधविश्वास का अतिसंचार करते हुए इस रिश्ते (मां के रिश्ते) को भी सहज नहीं रहने देते। इसी प्रकार के प्रसंगों को उठाते हुए सामाजिक कुचक्रों से बचने का संदेश देती है 'डायन मां' कहानी।'

निष्कर्ष

डॉ. दिनेश श्रीवास की सभी कहानियां पाठक को सोचने पर विवश करतीं हैं। स्थितियों से उपजे वेदनाओं को संवेदनाओं में परिणत कर देतीं हैं। पाठकों को संवेदनाओं और मानवीय मूल्यों की आवश्यकता महसूस होने लगती है–यही उनकी कहानियों की सफलता है। भूतपूर्व प्राध्यापक व समीक्षक डॉ. एस. एल. गोयल (म.प्र.) ने इन कहानियों के विषय में कहा हैः

''..... इन कहानियों को पढ़ते हुए कथ्य गत ताजगी, बनावट और बुनावट दोनों दृष्टि से आकर्षण और सहज संप्रेषणीयता का तत्व स्वतः उभर आता है। एक प्रकार से ये कहानियां हिंदी के महान कथाकार प्रेमचंद–सुदर्शन स्कूल का स्मरण कराती है। आधुनिक कथा कौशल की वे कहानियां जो हिंदी के परंपरागत पाठक को पल्ले नहीं पड़ती रही, पाठक वर्ग इस लोकप्रिय विधा कहानी तक से छिटक कर दूर होता गया है, ये कहानियां वैसी नहीं है। ये कहानियां तो पाठक को पढ़ने का न्योता देने वाली, संवेदना और भाषिक संरचना सभी दृष्टियों से सहज संप्रेषणीय कहानियां है जिनके आधार पर कहानीकार डॉ दिनेश श्रीवास को संभावनाओं के कथाकार भी कहा जा सकता है।'

डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह ने उनके कहानियों के महत्व को बताते हुए कहा हैः

''समग्र रूप से कहा जाए तो आठों कहानियों की विषयवस्तु दिनेश जी ने अपने आस–पास के वातावरण से उठाई है जो उनकी कहानियों को सहज ग्राह्य बनाती है। सारी कहानियों के प्रसंग किसी न किसी रूप में अनुभूत सत्य प्रतीत होते हैं।''

अतः निष्कर्षतः कहा सकता है कि न केवल उनकी कहानियां ग्राह्य हैं अपितु कहानियों में सम्प्रेषित जीवनमूल्य और संवेदना भी ग्राह्य है।

संदर्भ सूची

1. अश्क उपेन्द्रनाथ, *हिन्दी कहानी एक अंतरंग परिचय,* नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1967।
2. कपूर मस्तराम, *अस्तित्ववाद से गाँधीवाद तक,* वीणा प्रकाशन, नई दिल्ली 2000।
3. कपूर श्याम चन्द्र, *हिन्दी साहित्य का इतिहास,* हिन्दी ग्रंथ अकादमी, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999।
4. चतुर्वेदी रामस्वरूप, *हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास,* लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2008।
5. गुप्त डॉ. गणपति चन्द्र, *हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास,* लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2008।
6. गुप्त लालचंद, *अस्तित्ववाद साहित्यिक और सांस्कृतिक भूमिका,* अध्ययन केन्द्र प्रकाशन, लखनउ, 1975।
7. अग्रवाल प्रतिभा, *भारतीय साहित्य के निर्माता मोहन राकेश,* साहित्य अकादमी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1979।
8. अग्रवाल सुषमा, *समकालीन नाट्य साहित्य और मोहन राकेश,* अनुपम प्रकाशन, जयपुर, संस्करण 1975।
9. ओझा दशरथ, *हिन्दी कहानी कोष,* नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, संस्करण 1975।
10. ओझा डॉ. दशरथ, *आज के हिन्दी नाटक,* राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, संस्करण 1975।
11. कुरूप के. वी. नारायण, *साठोत्तर हिन्दी नाटक और कहानी,* लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009।
12. कृष्ण डॉ. राजेन्द्र, *हिन्दी नाटक में नायक का स्वरूप,* भारतीय ग्रंथ अकादमी, दिल्ली, संस्करण 1994।
13. चतुर्वेदी रामस्वरूप, *हिन्दी गद्य विन्यास और विकास,* लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2008।
14. श्रीवास डॉ. दिनेश, संवेदना (काव्य एवं कथा संग्रह) नोशन प्रेस चेन्नई संस्करण 2021।

पत्र–पत्रिकाएं

1. स्याही की ताकत, संपादक रीतेश श्रीवास्तव, रायपुर, दिनांक 16–22 सितंबर।
2. राजधानी से जनता तक, संपादक, शनि कुमार लहरे, जांजगीर, 16 सितंबर।

****